विपश्यना

साधकों का
मासिक प्रेरणा पत्र

वार्षिक शुल्क रु. 30/-
आजीवन शुल्क रु. 500/-

बुद्धवर्ष 2559, श्रावण पूर्णिमा, 29 अगस्त, 2015 वर्ष 45 अंक 3

For Patrika in various languages, visit: http://www.vridhamma.org/Newsletter_Home.aspx

धम्मवाणी

न तावता धम्मधरो, यावता बहु भासति।
यो च अप्पम्पि सुत्वान, धम्मं कायेन पस्सति।
स वे धम्मधरो होति, यो धम्मं नप्पमज्जति॥

धम्मपद - २५९, धम्मट्ठवग्गो

बहुत बोलने से (कोई) धर्मधर नहीं हो जाता। जो (कोई) थोड़ी सी भी (धर्म की बात) सुन कर काय से धर्म का दर्शन करने लगता है (अर्थात, विपश्यना करने लगता है) और जो धर्म (के आचरण) में प्रमाद नहीं करता, वही निःसंदेह 'धर्मधर' होता है।

लोक-गुरु बुद्ध एवं गुरु-शिष्य परंपरा

आज के इस पावन धर्म दिवस पर उन महाकारुणिक लोक गुरु (सभी लोकों के शास्ता) भगवान बुद्ध की वंदना करें। उनके प्रति मन में असीम कृतज्ञता का भाव जागे जिस व्यक्ति ने एक नहीं, दो नहीं, सौ नहीं, अनगिनत जन्मों में अपनी पुण्य पारमिताओं को पूरा करते-करते यह अवस्था प्राप्त की, जिससे कि यह खोयी हुई विद्या खोज निकाली। भारत की बहुत पुरातन विद्या, बार-बार जागती है, कुछ समय तक भारत तथा सारे विश्व का कल्याण करती है और फिर अपना शुद्ध रूप खो देने के कारण दूषित हो जाती है तो बलहीन हो जाती है, फलहीन हो जाती है, लुप्त हो जाती है। ऐसा बार-बार होता आया है।

इस महापुरुष ने प्रयत्न करके, परिश्रम करके, पराक्रम करके, पुरुषार्थ करके यह खोई हुई विद्या फिर खोज निकाली। अपना कल्याण किया, शुद्ध हुए, बुद्ध हुए, मुक्त हुए। लेकिन केवल अपना ही कल्याण करके नहीं रह गये, बड़े करुण चित्त से बांटने लगे और जीवन भर मुक्त हस्त से बांटते ही रहे। लक्ष्य केवल एक ही कि कैसे अधिक से अधिक लोगों का कल्याण हो जाय, मंगल हो जाय। दुःखों से उनकी विमुक्ति हो जाय। जन्म-जन्म के दुःखों से छुटकारा मिल जाय। बदले में कुछ पाने के लिए नहीं, लाभ, सत्कार या यश के लिए भी नहीं, कोई संप्रदाय स्थापित करके अपने आप को सदियों तक पूज्य बना लेने के लिए भी नहीं; बल्कि केवल लोक-कल्याण हो, लोक-मंगल हो, इन्हीं भावों से प्रेरित हो करके जीवन भर लोक-सेवा करते रहे।

अगर यह विद्या नहीं खोजते तो हमें कैसे प्राप्त होती? खोज भी लेते और अपने तक ही सीमित रखते, तो हमें कैसे प्राप्त होती? तो असीम कृतज्ञता का भाव, श्रद्धा का भाव, उपकार का भाव उस महापुरुष के प्रति, जिसने यह कल्याणकारी विद्या खोज कर अपना ही कल्याण नहीं किया, बल्कि औरों के कल्याण के लिए इसका वितरण करते रहे, इसको बांटते रहे। और असीम कृतज्ञता का भाव उन आचार्यों के प्रति जिनने उनके बाद पड़ोसी देश में गुरु-शिष्य परंपरा द्वारा इतने लंबे अरसे तक पीढ़ी-दर-पीढ़ी, इसे शुद्ध रूप में जीवित रखा, इसमें कोई सम्मिश्रण नहीं होने दिया, इसे बिगड़ने नहीं दिया, जबकि अपने देश में बुद्ध के ५०० वर्ष के बाद ही यह लुप्त हो गयी। अतः उस आचार्य-परंपरा के प्रति और उस आचार्य-परंपरा के पिछले प्रतिनिधि गुरुदेव सयाजी ऊ बा खिन के प्रति मन असीम कृतज्ञता और श्रद्धा के भाव से भरे।

उन्होंने यह विद्या शुद्ध रूप में न कायम रखी होती तो हमें कैसे प्राप्त होती? लोक कल्याण का दरवाजा फिर से कैसे खुलता? तो उनके प्रति असीम श्रद्धा, असीम कृतज्ञता का भाव। कृतज्ञता कैसे प्रकट करें? केवल वाणी द्वारा उनका गुण गा लेने से सही माने में कृतज्ञता नहीं प्रकट हुई। उनकी प्रशंसा, प्रशस्ति के गुण गा-गा कर हम सारा जीवन बिता दें, तो भी उनके उपकार का कोई बदला नहीं। तो कैसे कृतज्ञता प्रकट करें? वैसे जैसे उन्होंने शुद्ध धर्म को कायम रखा। इस विद्या को स्वयं अपने जीवन में उतारा और इसे जीवंत रखा। यह धर्म-गंगा इसी प्रकार सदियों तक अपने शुद्ध रूप में बहती जाय तभी सही माने में उनके प्रति कृतज्ञता प्रकट कर सकेंगे।

धर्म बिल्कुल शुद्ध रहे। धर्म को संप्रदाय से बिल्कुल दूर रखें। धर्म कहीं बौद्ध धर्म न बन जाय, कहीं हिंदू धर्म न बन जाय, कहीं जैन धर्म न बन जाय, कहीं मुस्लिम धर्म, कहीं सिख धर्म, ईसाई धर्म, पारसी धर्म, यहूदी धर्म बन कर न रह जाय। नहीं तो दूषित हो जायगा। जैसे ही धर्म को हिंदू धर्म कहने लगेंगे, हिंदू प्रमुख हो जायगा, धर्म गौण हो जायगा। धर्म अंधेरे में चला जायगा। हिंदू ही हिंदू प्रकाश में आयेगा। बौद्ध, जैन, ईसाई, मुस्लिम, सिख, यहूदी, पारसी... धर्म को इन बैसाखियों (crutches) की जरूरत नहीं है। धर्म के साथ ये शब्द लगते ही धर्म का महत्त्व कम हो गया। धर्म को इन शब्दों की जरूरत नहीं। धर्म तो सर्वव्यापी है, विश्वव्यापी है। अणु-अणु पर उसके नियमों की हुकूमत होती है। सजीव, निर्जीव सब पर। वह केवल हिंदुओं का कैसे होगा? वह बौद्धों, जैनियों, मुसलमानों, ईसाईयों, सिखों आदि का कैसे होगा?

धर्म को पिछले डेढ़-दो हजार वर्षों के अंधेरे से बाहर निकालना है। दुर्भाग्य से अपने देश में धर्म और संप्रदाय पर्यायवाची हो गये। अब तो संप्रदाय ही संप्रदाय प्रमुख हो गया। अपने को हिंदूधर्मी कहने वाला व्यक्ति, उस परंपरा के जो कर्म-कांड हैं, तीज त्योहार, पर्व उत्सव हैं उन्हें मना करके खुश हो जाता है। उस परंपरा की जो दार्शनिक मान्यता है, उसे मान कर खुश हो जाता है और अपने आपको बड़ा धार्मिक समझता है। जब कि हो सकता है वह धार्मिक हो भी या नहीं भी। ठीक इसी प्रकार अपने को बौद्धधर्मी, जैन.... यहूदीधर्मी कहने वाला उस-उस परंपरा के कर्म-कांडों को पूरा कर लेगा। मंदिर वाला मंदिर जा कर खुश हो जायगा, मस्जिद वाला मस्जिद जा कर, गिरजाघर वाला गिरजाघर जाकर ... यह कर्म-कांड पूरा कर लिया, वह कर्म-कांड पूरा कर लिया और सारा जीवन इस धोखे में बिता देगा-- मैं बड़ा धार्मिक हूं। जब धर्म का अर्थ ही भूल गये तब धारण कैसे करेंगे?

जब-जब हमारा चित्त विकारों से विकृत होता है, तब-तब हम अधार्मिक हो जाते हैं। जब-जब विकारों से मुक्त होता है, तब-तब

धार्मिक होते हैं। हिंदू कहने वाला अपने को हिंदू, बौद्ध कहने वाला ... बौद्ध, जैन, ईसाई, मुस्लिम आदि नामों से पुकारता रहे, पर यह समझता रहे कि जब तक मेरे मन में विकारों को दूर करने का कोई काम नहीं हो रहा, कोई परिश्रम, पुरुषार्थ नहीं हो रहा, तब तक मैं धर्म से बहुत दूर हूं। मन जब विकारों से विकृत होता है, तब शरीर से चाहे जैसा काम करें, दूषित ही होगा। वाणी से चाहे जैसा काम करें, दूषित ही होगा, क्योंकि मन दूषित है तो जड़ें दूषित हैं। हर कर्म मन में ही उपजता है। फिर वाणी पर प्रकट होता है, शरीर के कर्मों के रूप में प्रकट होता है। जड़ें रोगी हैं तो वाचिक, कायिक कर्म रोगी ही होंगे।

विपश्यी साधक, साधिका को यह बात खूब अच्छी तरह समझ लेनी चाहिये कि बौद्ध अपने आपको बौद्ध कहें, जैन अपने को जैन कहें...; इन नामों से हमें कुछ झगड़ा नहीं, पर धार्मिक, धर्मवान, धर्मिष्ठ तो बनें। ऐसा बन कर किसी पर अहसान नहीं करते, अपना ही कल्याण कर रहे हैं। कोई चित्त को निर्मल करता है तो उसकी वाणी और शरीर के सारे कर्म अपने आप अच्छे हो जाते हैं। जड़ें सुधर गयीं तो सारा पेड़ तंदुरुस्त हो गया, स्वस्थ हो गया, निरोग हो गया।

जब-जब मन को मैला करते हैं तब-तब और कोई समझे या न समझे, विपश्यी साधक खूब समझेगा कि देख मन मैला हुआ और मैं व्याकुल हुआ ना। मन में विकार जागा, मैं व्याकुल हुआ ना। क्रोध द्वेष, भय, ईर्ष्या, अहंकार, जो जागा उसी ने मुझे व्याकुल बना दिया। यह कुदरत का नियम है। इसी को अपने यहां धर्म-नियामता कहते थे। मन मैला करते ही दंड मिलेगा। देर नहीं होगी। मरने के बाद दंड मिलेगा सो अलग। इसी क्षण दंड मिलेगा। जैसे ही मन में विकार जगाया, उसके साथ-साथ दुःख जागा, दुःख समुदय हुआ। उसका उदय साथ-साथ हुआ। दंड तुरंत मिलने लगा। और जैसे ही मन को विकारों से मुक्त किया, निर्मल किया कि उसमें मैत्री जागने लगी, करुणा जागने लगी, सद्भावना जागने लगी।

अब फिर कुदरत का कानून, धर्म की नियामता, धर्म की धर्मता कि जैसे ही चित्त निर्मल हुआ ये सद्गुण जागने लगे, तुरंत इनाम मिलने लगा, पुरस्कार मिलने लगा। तत्काल बड़ा सुख, बड़ी शांति। मरने के बाद तो और अच्छी बात होगी ही, पर अब क्या हो रहा है! सामान्य व्यक्ति अपने छोटे से ऊपरी चित्त को लेकर कभी यहां भटका, कभी वहां भटका, परंतु उसके भीतर अंतर्मन की गहराइयों तक क्या हो रहा है, नहीं समझ पायगा। अंतर्मन की गहराइयां हमारी संवेदनाओं से जुड़ी हुई हैं। वहां क्या हो रहा है? राग जागा, कि द्वेष जागा, कि भय जागा, कि ईर्ष्या जागी, कि मात्सर्य जागा, कि अहंकार जागा- क्या जागा और जागते ही क्या हुआ?

विपश्यी साधक अपनी अनुभूतियों से इस धर्म-नियामता को, धर्म के नियमों को समझते जाता है। चित्त निर्मल हुआ, उसमें मैत्री जागी, करुणा जागी, सद्भावना जागी, शांति जागी, सुख जागा। यह शास्त्रों की बात नहीं, गुरु-महाराज के कहने या अंध-विश्वास से मान लेने की बात नहीं। परंपरानुसार मान लेने की बात नहीं। सच्चा विपश्यी साधक होगा तो अनुभूति से जानेगा।

धर्म का नियम है-- **इमस्मिं सति इदं होति**- यह-यह होगा तो यह परिणाम आयगा। दुनिया की कोई शक्ति नहीं बदल सकती। यह-यह नहीं होगा तो यह परिणाम नहीं आयगा- **इमस्मिं असति, इदं न होति।**

इतनी सीधी-सीधी बात, उसे इन संप्रदायवादियों ने कहां उलझा दिया। धर्म को धारण करना बड़ा कठिन है। खूब गहरी विपश्यना करता है तब अंतर्मन की गहराई तक इस कानून को अनुभूति से समझता है। तब अपना स्वभाव पलटने का काम करता है। स्वभाव पलटता है, तब धर्म धारण होने लगा। क्योंकि धर्म समझने लगा तो धारण होने लगा। आग पर हाथ रखने से हाथ जलता है, यह धर्म-नियामता है। यह ऋत है, कुदरत का कानून है। मुझे जलना नहीं अच्छा लगता, मैं अपने हाथ को जलती हुई आग से दूर कर लूं। मैं विकार जगाता हूं तो जलता हूं, व्याकुल होता हूं, दुखियारा हो जाता हूं। मुझे व्याकुल होना, दुखियारा होना नहीं अच्छा लगता तो विकारों से दूर रहूं। उसी प्रकार दूर रहूं जैसे जलते हुए अंगारे से। धर्म की इतनी सीधी सरल बात और कहां उलझा दिया। यह विपश्यना विद्या जिस दिन से खोई, उस दिन से सारा का सारा देश भटक गया, जैसे सारे कुंओं में भांग पड़ गयी। जो पीता है, वही भांग के नशे में, संप्रदाय के नशे में, कर्म-कांड के नशे में आ जाता है। अपने को धार्मिक समझे जा रहा है जबकि बेचारे में धर्म का नामो-निशान नहीं। बहुत दिनों अंधेरे में रहे। अपना भी नाश किया औरों का भी नाश किया। अब तो जागो, धर्म के जागने का समय आया है।

इस परंपरा के आचार्यों के प्रति सचमुच कृतज्ञता प्रकट करनी है तो पहली बात यह कि धर्म को शुद्ध धर्म रहने दें। उसके साथ कोई सांप्रदायिक विशेषण लगा करके बिगड़ने न दें। 'हिंदू' कहने में कोई दोष नहीं, पर 'हिंदू-धर्म' कहने में बहुत बड़ा दोष, 'बौद्ध' कहने में कोई दोष नहीं, पर 'बौद्ध-धर्म' कहने में बहुत बड़ा दोष, 'जैन-धर्म' कहने में बहुत बड़ा दोष,... इसे समझें।

समाज के कुछ लोगों का एक समूह है जो अपने आप को हिंदू कहता है। यह एक समुदाय है, समाज है, संगठन है; जैसे एक परिवार के लोग अपने परिवार के भले के लिए, उसकी सुरक्षा के लिए साथ-साथ रहते हैं और साथ-साथ खुशियां एवं पर्व-त्योहार मनाते हैं वैसे ये भी मनायें, बड़ी अच्छी बात; पर शर्त यह कि हमारी वजह से समाज के किसी अन्य प्राणी का मन न दुःख जाय, वह व्याकुल न हो जाय। बस, फिर मनायें पर उसे धर्म न कहें। ठीक इसी प्रकार बौद्ध समझें कि हमारा एक समाज है, समुदाय है, संगठन है। हम अपनी परंपरा के व्रत, पर्व-त्योहार, खुशियां मनाते हैं, अपना social function करते हैं। इससे धर्म का लेन-देन नहीं। ऐसे ही जैन, मुस्लिम, ईसाई, सिख आदि यह समझने लग जायँगे कि जिनको हम धर्म कहे जा रहे हैं, उनका धर्म से कोई दूर-परे का भी संबंध नहीं।

जितना-जितना चित्त विकारों से मुक्त हुए जा रहा है, बस हममें उतना-उतना धर्म आ रहा है। जितना-जितना चित्त विकारों से विकृत हुए जा रहा है, उतना-उतना हमारा धर्म छूटे जा रहा है। एक ही मापदंड-- इसी मापदंड से हर व्यक्ति अपने आप को मापता रहेगा। पहली बात धर्म के शुद्ध स्वरूप को समझते रहें ताकि अंधेरे में भटक न जायँ-- हिंदू, बौद्ध, जैन आदि के नाम से न भटकें। धर्म धर्म है, सार्वजनीन, सार्वदेशिक, सार्वकालिक और सनातन है।

धर्म किस माने में सनातन है। आज के लाखों, करोड़ों वर्ष पहले भी जो धर्म नियामता थी, धर्म के जो नियम थे, वे आज भी ठीक वैसे ही हैं और आज के लाखों, करोड़ों वर्ष के बाद भी वैसे ही रहेंगे, जैसे कि आज हैं। इस माने में सनातन। यथा आग का धर्म है जलना और जलाना। करोड़ों वर्ष पहले भी यही स्वभाव था, आज भी यही स्वभाव है, करोड़ों वर्षों के बाद भी यही स्वभाव रहेगा। विकारों का धर्म है- व्याकुल करना और व्याकुल होना, करोड़ों वर्ष पहले भी यही स्वभाव था, आज भी यही स्वभाव है और आगे करोड़ों वर्ष के बाद भी यही स्वभाव रहेगा। निर्मल चित्त का स्वभाव है- सुखी-शांत होना तथा औरों को सुखी-शांत बनाना। यह नियम करोड़ों वर्ष पहले भी ऐसा ही था, आज भी है, करोड़ों वर्ष बाद भी ऐसा ही रहेगा। सनातन है, सब पर लागू होता है, सब जगह लागू होता है तभी धर्म है, नहीं तो धर्म नहीं। यह बात विपश्यी साधक जितनी गहराई से सीख जायगा, उतनी ही गहराई से आगे बढ़ता चला जायगा। अपने मंगल के साथ औरों का भी मंगल साधने लगा।

अतः पहली बात तो यह कि धर्म के सही स्वरूप को समझें, और दूसरी महत्त्वपूर्ण बात यह कि केवल बुद्धि के स्तर पर समझ कर न रह

जायँ। गुरु महाराज ऐसा कहते हैं, उन पर बड़ी श्रद्धा है। इसलिए श्रद्धा के स्तर पर स्वीकार करके न रह जायँ। अनुभूति पर उतारें। बार-बार अनुभूति पर उतारें। यह जो सुबह-शाम, सुबह-शाम की साधना करने को कहते हैं, वह किसलिए? कि धर्म अनुभूति पर उतर रहा है। अंर्तमुखी होकर भीतर देख रहे हैं, चित्त में कैसी चित्तवृत्ति जागी, कैसी संवेदना हुई, प्रतिक्रिया की तो हमने कैसी प्रतिक्रिया की, क्या परिणाम आया। प्रतिक्रिया नहीं की तो क्या परिणाम आया। यह धर्म है, धर्म की नियामता है, धर्म स्थिति है, धर्म की धर्मता है। Universal law of nature है। इसको अनुभूति पर उतारते रहेंगे तो ही इसका लाभ होगा अन्यथा फिर खतरा बन कर रह जायगा कि हम धर्म को खूब समझने वाले हैं, हम धर्म के बड़े ज्ञानी हैं। बाकी लोग धर्म को समझते नहीं, बड़े अज्ञानी हैं। इस नशे में सारा जीवन बिता दोगे। इसलिए दो काम जरूरी हैं-- एक तो धर्म को समझेंगे और दूसरा अनुभूति द्वारा समझ कर जीवन में उतारेंगे। समय-समय पर यह १० दिनों का, कि २० दिनों का, कि ३० दिनों का, कि ४५ दिनों का, कि उससे भी अधिक दिनों का, जैसे समय हो, जैसे अवकाश मिले, उतने दिनों का शिविर ले करके गहराइयों तक सत्य का दर्शन करना सीखेंगे। फिर रोज सुबह-शाम, सुबह-शाम अभ्यास करते रहेंगे और जांचते रहेंगे कि धर्म जीवन में उतर रहा है कि नहीं। मेरे आचारण में उतर रहा है कि नहीं। सचमुच मेरा चित्त निर्मल हो रहा है कि नहीं। कहीं विपश्यना के नाम पर अपने आपको धोखा तो नहीं दे रहा। कहीं इसको कर्म-कांड तो नहीं बना लिया। क्या सचमुच मुझे संवेदनाओं की अनुभूति होती है? और होती है तो क्या उसके प्रति अनित्य बोध जागता है? और जागता है तो क्या समता पुष्ट होती है?

संवेदना भी हुई जा रही है, और सुखद हो तो हम उसके प्रति चिपकाव भी पैदा किये जा रहे हैं, दुःखद हो तो उसके प्रति दुराव भी पैदा किये जा रहे हैं और समझते हैं- हम खूब विपश्यना कर रहे हैं। गुरुजी, इतने वर्षों से करता हूं, रोज करता हूं। अरे, तेरे जीवन में फर्क पड़ा कि नहीं? तेरे आचरण में, तेरी चित्त की निर्मलता में, कुछ फर्क पड़ा कि नही? स्वयं जांचना होगा। मैं धर्म की राह पर सचमुच प्रगति कर रहा हूं कि नहीं-- इसे स्वयं जांचना पड़ेगा। अपने आप को धोखे में नहीं रखना है। मुझे धर्म इसलिए धारण करना है कि धर्म के नियमों को तोड़ करके मैं बड़ा व्याकुल हो जाता हूं। चाहे जितनी धन-संपदा इकट्ठी कर लूं, चाहे जितनी सामाजिक प्रतिष्ठा इकट्ठी कर लूं, चाहे जितनी सत्ता हाथ में ले लूं, मुझे चैन नहीं मिलता। मुझे शांति नहीं मिलती। बड़ा बेचैन रहता हूं, आखिर क्या बात है? कहीं कुछ कमी है। सचमुच विपश्यना करेगा तो सच सामने आने लगेगा। या तो तूने संवेदना को जाना ही नहीं या तुझे अनुभूति नहीं हो रही। तू मानस के ऊपरी-ऊपरी हिस्से पर ही सारा खेल खेल रहा है। तुझे संवेदना मालूम होने लगी तो संवेदनाओं का खेल-खेल रहा है। प्रिय लगती है तो राग जगाता है, आसक्ति जगाता है; अप्रिय लगती है तो द्वेष जगाता है। तू विपश्यना नहीं कर रहा, जरा-सी भी नहीं कर रहा, परिणाम कैसे आयेंगे? तेरे जीवन में सुख-शांति कैसे आयेगी? तूने धर्म को धारण करना ही नहीं सीखा। धर्म के नियमों को पहचान ही नहीं पाया तो धारण कैसे करेगा! यूँ अपने-आपको जांचते रहेंगे।

जो व्यक्ति अपने भीतर, अपने बारे में सच्चाई को जांचता रहता है और जहां भूल हुई वहां सुधारता रहता है, उसे चिंता करने की कोई बात ही नहीं। वह अपने-आप प्रगति करते जा रहा है। अंतिम लक्ष्य तक पहुँच ही जायगा। लेकिन जो यह करना बंद कर देगा, कोरा बुद्धि-विलास करेगा, वाणी-विलास करेगा, केवल श्रद्धा के स्तर पर विपश्यना को स्वीकार करेगा, उसे कर्म-कांड बना देगा, यंत्रवत काम करते जायगा तो प्रगति नहीं हो सकती। अतः सभी विपश्यी साधक-साधिकाएं अपने भले के लिए खूब समझें कि मैं इस रास्ते पर क्यों चलने लगा! अपने कल्याण के लिए। अरे, जो अपना कल्याण नहीं कर सका वह औरों का क्या कल्याण करेगा! जो अपना भला नहीं कर सका, वह औरों का क्या भला करेगा! जो अपना मंगल नहीं साध सका, वह औरों का क्या मंगल साधेगा!

एक अंधा आदमी, दूसरे अंधे को कैसे रास्ता बतायगा? एक लंगड़ा आदमी, किसी दूसरे लंगड़े आदमी को कैसे सहारा देगा? खूब समझें-- धर्म धारण करके पहले आत्म-मंगल साधें, फिर सर्व-मंगल में लग जायँ। पहले आत्म-कल्याण करें, फिर सर्व-कल्याण में लग जायँ। पहले आत्मोदय हो, फिर सर्वोदय में लग जायँ। तो समझो कि धर्म के रास्ते ठीक-ठीक चल रहे हैं। अपना भला किये बिना किसी और के भले की बात सोचना भी निकम्मी बात है। अपने आप को स्वस्थ-सबल बना कर ही हम किसी दूसरे को सहारा दे सकते हैं अन्यथा नहीं। अतः अपने-आप में जो बुराई हो उसे दूर करके, दुर्गुण दूर करके देखें कि सद्गुण आ रहे हैं कि नहीं। विकार दूर हो कर विकार-विमुक्त अवस्था आ रही है कि नहीं। यूं जांचते रहेंगे। जांच तभी होगी जबकि रोज अंर्तमुखी होते रहेंगे। और यह जांच होती रहेगी, तो अपना सुधार होता रहेगा, तो सारी आचार्य परंपरा के प्रति, जिनकी कृपा से हमें यह कल्याणकारी विद्या मिली, भगवान गौतम बुद्ध से ले करके सयाजी ऊ बा खिन तक की सारी आचार्य परंपरा के प्रति सही माने में हमारी श्रद्धा प्रकट होगी, सही माने में उनके प्रति कृतज्ञता का भाव प्रकट होगा। वे इस बात की अपेक्षा नहीं करते कि कोई हमारे प्रति श्रद्धा प्रकट करे, कोई हमारे प्रति अपनी कृतज्ञता का भाव प्रकट करे; पर जिस करुण चित्त से उन्होंने यह विद्या बांटी, हम उसका सही उपयोग कर रहे हैं, तो उनकी मेहनत सफल हुई। उनका परिश्रम सफल हुआ। वे तो इसीलिए बांटते रहे कि अधिक से अधिक लोगों का कल्याण हो, अधिक से अधिक लोगों का मंगल हो। परंतु जब देश भूल ही चुका था तो कैसे मंगल होता? कैसे कल्याण होता? अब यह विद्या अपने शुद्ध रूप में फिर जागी है तो अपने मंगल के लिए, अपने कल्याण के लिए, अपने भले के लिए, इस विद्या में खूब पकें, खूब पकें। पकेंगे तो देखेंगे कि अपने मंगल के साथ-साथ औरों का भी मंगल होने लगा। अपने कल्याण के साथ-साथ औरों का भी कल्याण होने लगा। अपनी स्वस्ति मुक्ति के साथ-साथ औरों की भी स्वस्ति मुक्ति होने लगी।

धर्म अपने शुद्ध रूप में खूब फैले, खूब लोक कल्याण हो, खूब लोक मंगल हो, खूब लोक मंगल हो!

कल्याणमित्र,

सत्यनारायण गोयन्का

(पूज्य गुरुदेव द्वारा गुरु-पूर्णिमा के अवसर पर दिये गये प्रवचन का संक्षिप्त रूप)

नये उत्तरदायित्व

वरिष्ठ सहायक आचार्य

१. श्री जितेंद्र शिरोलकर, कोल्हापुर

नव नियुक्तियां

बालशिविर शिक्षक

१. श्री भगवानदास मोटियानी, जामनगर
२. श्रीमती इंदुबेन व्यास, जामनगर
३. श्री रामजीभाई गामी, जामनगर
४. श्रीमती ऊषा अग्रवाल, पटना

मंगलमृत्यु

मांडवी, कच्छ की वरिष्ठ सहायक आचार्या श्रीमती हीराबेन ईश्वरलाल शाह की २७ जुलाई को कैंसर रोग से मृत्यु हुई। अंतिम क्षणों तक उनकी समता एवं जागरूकता बनी रही। १९७५ में उन्होंने पहला शिविर किया, १९९६ में सहायक आचार्य नियुक्त हुईं और अधिकांशतः धम्मसिन्धु पर सेवाएं देकर अनेकों को कल्याणपथ पर अग्रसर करके अपना भी मंगल साधा। धम्मपरिवार की ओर से मंगल मैत्री।

आवश्यकता है।

धम्मथली, जयपुर में दीर्घकालिक धर्मसेवकों की आवश्यकता है। केंद्र व्यवस्थापक, शिविर-व्यवस्थापक, रख-रखाव, क्लर्क, बागवानी तथा सामान्य सेवा के लिए योग्य व्यक्ति निम्न पते पर शीघ्र संपर्क करें- फोन- 09950816589 या ईमेल- dhammathali.jpr@gmail.com

इथियोपिया का प्रतिवेदन

इथियोपिया में २० साधकों का पहला शिविर २००८ को लगा। ४० साधक प्रति शिविर के औसत से अब तक २१ दस दिवसीय, एक सतिपट्ठान एवं ८ किशोरों

Registered No. NSK/235/2015-2017

WPP Postal License No. AR/Techno/WPP-05/2015-2017

(औसतन २० बच्चों) के शिविर आयोजित हुए हैं। भविष्य में कीनिया के सहयोग से हर देश में हर दूसरे वर्ष सतिपट्ठान शिविरों का आयोजन होगा। अदिसअबाबा में साप्ताहिक सामूहिक साधना, बीच-बीच में एक दिवसीय मासिक साधना और भिन्न-भिन्न अवसरों पर तीन दिवसीय साधनाएं आयोजित होती हैं। भाग लेने वाले अधिकतर साधक भिन्न-भिन्न क्षेत्रों के स्थानीय इथियोपियन होते हैं, जिनकी औसतन आयु २५-३० के बीच होती है। अब तक दो अंधों ने शिविर में भाग लिया है और वे अन्य अंधों को प्रेरित करते रहते हैं। यहां सहायक आचार्य भारत, कनाडा... आदि बाहरी देशों से आते हैं। दूसरे शिविर के लिए तो आचार्य ब्राजील से आ रहे हैं। भविष्य के लिए न्यासीगणों ने एक भूखण्ड देखा है, जहां केंद्र बनेगा। सतिपट्ठान का अनुवाद और रेकार्डिंग चल रहा है, यद्यपि अभी तक अंग्रेजी जानने वाले लोगों ने ही भाग लिया है। हमारे धर्म साधकों द्वारा बोया गया पुण्य का बीज आगे फले-फूले और साधना केंद्र की स्थापना हो।

मोजम्बिक, अफ्रीका में हुए प्रथम शिविर का प्रतिवेदन

पुर्तगीज भाषा बोलने वाले मोजम्बिक क्षेत्र में पहला शिविर जून २२ से जुलाई ३, २०१५ तक लगा। इसमें भाग लेने वाले १९ साधक, ४ धम्मसेवक, २ अंशकालिक सेवक थे। अधिकतर राजधानी मोपुटो से थे। अन्य पड़ोस के स्वाजी लैंड से आये थे जहां पहले शिविर लग चुके थे और साउथ अफ्रीका से आये थे जो २ घंटे की दूरी पर है। शिविर आयोजन करने वाले तीन लोग थे जिन्होंने साउथ अफ्रीका के धम्म पताका पर पहला शिविर किया था और विपस्सना साधना की तकनीक से इतने प्रभावित हुए कि उन्होंने फरवरी २०१५ में दूसरा शिविर किया। जब वे मोजाम्बिक लौटकर आये तो अपनी निपुणता और क्षमता का उपयोग करके शिविर आयोजन किया। प्रोग्राम सुनकर नामाछा गांव के शिविर स्थल के मालिक बहुत ही प्रभावित हुए और वे भी शिविर में बैठे। सेवा देने के लिए ब्राजील का एक पुराना साधक हवाई जहाज से आया और अपने अनुभव बताये। जनवरी ६, २०१६ को यहां दूसरा शिविर लगेगा। हमारे धर्म पिता पूज्य गोयन्का जी ने कहा है कि हर शहर और गांव में जैसे स्कूल और अस्पताल होते हैं, वैसे ही हर शहर और गांव में शुद्ध धर्म का प्रचार हो। आधुनिक तकनीकी विधि से धर्म का सिखाया जाना विपश्यना करने वालों की पारमिताओं को प्रमाणित कर रहा है।

आगामी शरद पूर्णिमा एवं पूज्य गुरुदेव की पुण्यतिथि के उपलक्ष्य में उन्हें सच्ची श्रद्धांजलि देने के लिए एक-दिवसीय महाशिविर

2015- 2 अक्टूबर, शुक्रवार को **'ग्लोबल विपश्यना पगोडा'** में पूज्य माताजी के सान्निध्य में एक दिवसीय महाशिविर होगा। आगामी २९ सितंबर को पूज्य गुरुदेव श्री गोयन्काजी की दूसरी पुण्य-तिथि एवं शरद पूर्णिमा के उपलक्ष्य में ग्लोबल पगोडा में एक दिवसीय शिविर पूर्व प्रकाशित तिथि २७ सितंबर के बदले **२ अक्टूबर, शुक्रवार** को होगा। कृपया इस **बदली हुई तिथि** पर ध्यान दें और अधिकाधिक लोग सम्मिलित होकर लाभ उठाएं तथा नित्य-नियमित अपनी दैनिक साधना करते हुए मुक्ति मार्ग पर अग्रसर हों, यही उनके प्रति सच्ची श्रद्धांजलि होगी। इस अवसर पर अन्य स्थानों पर भी लोग एक दिवसीय शिविर या सामूहिक साधना करके लाभान्वित हो सकते हैं। **शिविर -समयः** प्रात: **11** बजे से अपराह्न **4** बजे तक. 3 बजे के प्रवचन में बिना साधना किये लोग भी बैठ सकते हैं। बुकिंग के लिए कृपया निम्न फोन नंबरों या ईमेल से शीघ्र संपर्क करें। कृपया बिना बुकिंग कराये न आयें और **समग्गानं तपोसुखो**- सामूहिक तप-सुख का लाभ उठाएं। **संपर्कः** 022-28451170 022-337475-01/43/44- Extn. 9, (**फोन बुकिंग : 11** से **5** बजे तक, प्रतिदिन) **Online Regn.: www.oneday.globalpagoda.org**

बुद्ध स्मृति पार्क, पटना में भी एक-दिवसीय महाशिविर

पटना जंक्शन के पास बुद्ध स्मृति पार्क के बी-ब्लाक में स. आचार्यों की उपस्थिति में २ अक्टूबर को पूज्य गुरुदेव के प्रति सच्ची श्रद्धांजलि अर्पित करने के लिए एक दिवसीय महाशिविर आयोजित किया गया है। साधक-साधिकाएं इसमें भाग लेने हेतु कृपया अपने नाम श्री यादव फोन- 9326893651, 7739135735, या श्री मनराव- 9431142402 को लिखवा दें। यहां हर महीने **दूसरे रविवार** को **एक दिवसीय** तथा प्रतिदिन सायं ५ से ६ बजे तक सामूहिक साधना का लाभ उठाएं। अनेकानेक धर्मसेवकों की भी आवश्यकता है।

दोहे धर्म के

धर्महीन पुरुषार्थ से, धर्मवान बन जाय।
त्यागे जीवन पाप का, तो महान बन जाय॥

धर्म जगे तो सुख जगे, हरखित पुलकित होय।
अंतर की गांठें खुलें, मानस निरमल होय॥

धर्मवान की जिंदगी, परम अर्थ हित होय।
अपना भी होवे भला, भला सभी का होय॥

अंतर मन लहरा उठे, निर्मल धर्म तरंग।
अंग-अंग मैत्री जगे, उमड़े मोद उमंग॥

केमिटो टेक्नोलॉजीज (प्रा०) लिमिटेड

८, मोहता भवन, ई-मोजेस रोड, वरली, मुंबई- 400 018
फोन: 2493 8893, फैक्स: 2493 6166
Email: arun@chemito.net
की मंगल कामनाओं सहित

दूहा धरम रा

पढ्यो सुण्यो अर मान लियो, पर धार्‌यो ना रंच।
अणधार्‌यां ना धरम है, है मिथ्या परपंच॥

इसो धरम रो नियम है, इसी धरम री रीत।
धार्‌यां ही निरमळ हुवै, पावन हुवै पुनीत॥

या ही रित है, नियम है, ईं स्यूं बच्यो न कोय।
धरम धार सुख ही हुवै, धरम त्याग दुख होय॥

जीवन मँह उतरे बिना, धरम न सम्यक होय।
काया वाणी चित्त रा, करम न निरमळ होय॥

मोरया ट्रेडिंग कंपनी

सर्वो स्टॉकिस्ट - इंडियन ऑईल, ७४, सुरेशदादा जैन शॉपिंग कॉम्प्लेक्स, एन.एच.६, अजिंठा चौक, जलगांव - ४२५ ००३, फोन. नं. ०२५७-२२१०३७२, २२१२८७७
मोबा.०९४२३१८७३०१, Email: morolium_jal@yahoo.co.in
की मंगल कामनाओं सहित

'विपश्यना विशोधन विन्यास' के लिए प्रकाशक, मुद्रक एवं संपादक: राम प्रताप यादव, धम्मगिरि, इगतपुरी- 422 403, दूरभाष : (02553) 244086, 244076.
मुद्रण स्थान : अपोलो प्रिंटिंग प्रेस, जी-२५९, सीकॉफ लि., ६९ एम.आय.डी.सी., सातपुर, नाशिक-422 007. **बुद्धवर्ष 2559, श्रावण पूर्णिमा, 29 अगस्त, 2015**

वार्षिक शुल्क रु. **30/-,** US $ 10, **आजीवन शुल्क** रु. **500/-,** US $ 100. **'विपश्यना' रजि. नं. 19156/71. Registered No. NSK/235/2015-2017**

WPP Postal Licence No. AR/Techno/WPP-05/2015-2017
Posting day- **Purnima of Every Month,** Posted at **Igatpuri-422 403,** Dist. Nashik (M.S.)

DATE OF PRINTING: 20 August 2015, DATE OF PUBLICATION: 29 August 2015

If not delivered please return to:-

विपश्यन विशोधन विन्यास
धम्मगिरि, इगतपुरी - 422 403
जिला-नाशिक, महाराष्ट्र, भारत
फोन : (02553) 244076, 244086, 243712,
243238. **फैक्स :** (02553) 244176
Email: info@giri.dhamma.org
Website: www.vridhamma.org